गीत
-अगीत

रमणिका गुप्ता

युगवाणी प्रकाशन
जवाहरनगर कानपुर

क्या इनका आभार मानूँ ?

कवि को प्रेरणा मिलती है और उससे कविता मुखरित हो जाती है।
क्या प्रेरकों को इसके लिए धन्यवाद दिया जाय ?
धन्यवाद देना चाहो, दे लो। यह जगत की रीति है। रीति निवाह लो !
पर क्या यह सच नहीं कि प्रेरकों को स्वयं अनुभूति नहीं कि कब और
कहाँ उन्होंने हृदय को उद्वेलित किया !
छोटे नागपुर की पहाड़ियाँ
वह वादी—
और उस वादी की वे सड़कें
और सड़कों के किनारे वे काले—भूरे पत्थर, पलाश के वन
नीला गगन, मुखर प्रकृति, रंगीन धरती और सुनहली साँझ—
क्या इनका आभार मानूँ ?
नहीं — यह धृष्टता न करूँगी।
मैं इन्हीं का रक्त हूँ—इन्हीं से बनी हूँ, इन्हीं में जीवित हूँ।
गोद में किलकारियाँ मारता बालक कृतज्ञता प्रदर्शित नहीं करता—
केवल मुस्करा देता है,
और उसकी यह मुस्कराहट उस गोद की कीमत अदा कर देती है।
मैंने गीत गुनगुनाये—
गीतों से लोग चौंके—रुके !
मेरा इसमें क्या दोष ?
बेसुरे स्वर भी यदि उन्हें प्रिय लगे और उन्होंने कहा,
"कवि, गाओ और गाती रहो"
तो इसके लिये किसे धन्यवाद दूँ !

श्री प्रकाश को ?

या धन्यवाद दूँ भगवती प्रसाद बाजपेयी जी को और
हंस कुमार तिवारी जी को!

उन अग्रजों को जिन्होंने कि मेरे स्वर को सहारा देकर —
ऊँचा किया।

या धन्यवाद दूँ इच्छाशङ्कर दुबे जी को जिन्होंने कि कापी के पन्नों में, डायरी के पृष्ठों में, टेलीफोन की डायरेक्टरी में इधर उधर बिखरी
कविताओं को संकलित कर पुस्तक का रूप देना चाहा—

या धन्यवाद दूँ श्री प्रतापचन्द्र शुक्ल को जिन्होंने मेरी कविताओं को
स्याही पहनाई और उन्हें मुद्रित किया अपने प्रेस में—

इन्होंने मुझमें आत्मीयता की झलक पाई और अपनी आत्मीयता
प्रकट की—

अपनों से तो यह अपेक्षा की ही जाती है—उन्हें ~~धन्यवाद~~ नहीं दिया
जाता।

और यदि धन्यवाद अपनों को भी देने लगूँ तो आप चाहेंगे कि मैं उनको भी धन्यवाद दूँ जो मेरे हैं, केवल मेरे! जिन्होंने मेरे गीतों को प्राण दिये, मेरे स्वर को राग दिया—भला अपने पति का ऋण भी कोई पत्नी कभी चुका पाई है? तो धन्यवाद के भौतिक औपचारिक
तरीकों से उसे चुकाने का प्रयास करूँ क्या?

नहीं, यह धृष्टता न होगी मुझसे—

—रमणिका

समर्पित

उस बेनाम दोस्त को—
जो बेनाम रह गया।
उस अरूप को—
जिसे आंकने को मेरी बेबस आत्मा चक्कर काटती रही
जो रंगों में रंग कर भी आंका न जा सका।
उस अनाम को
जिसका परिचय पाने को
बेचैन—
मैं कसमसाती रही।
जिसे जान कर भी पहचान न पाई।
उस अहसास को—
जिसका परस पाने को
मेरी देह छटपटाती रही।
जो बहुत पास हो कर भी परसा न जा सका।
उस प्रयास को—
जो बार-बार असफल रहा,
पर हारा नहीं।
उस आस को—
जो मर-मर कर जीती रही,
और डूब डूब तिरती रही।
उस श्वास को—
जो मिटी नहीं—बुझी नहीं,
सतत् बढ़ती रही।
उस प्रीत को
जो बार-बार टूटी,
पर रूठी नहीं—
झुकी नहीं—
थकी नहीं।

आमुख

भारतीय काव्यशास्त्र के अनुसार रस-पान करनेवाला हमारा मन होता है। जब हम इस पर विचार करते हैं, तभी हमें काव्य के स्वरूप की चेतना होती है। कभी हमारे लिये रसात्मक-अभिव्यक्ति काव्य के रूप में प्रकट होती है और कभी रमणीय अर्थ का प्रतिपादन कविता बन जाता है, किन्तु काव्य के यूरोपीय व्याख्याता मानसिक स्थितियों के रसात्मक वर्णन और विश्लेषण को अधिक महत्त्व देते हैं। अरस्तू का कथन है—'कविता जीवन की अनुकृति है।' आरनाल्ड का कहना है — वह जीवन की आलोचना है और वर्ड्सवर्थ सशक्त भावना के सहज प्रवाह के भावस्मरण को कविता मानते हैं। किन्तु इन मान्यताओं में मुझे महामना जॉनसन का यह मत अधिक मान्य प्रतीत होता है कि विवेक और कल्पना के मिश्रण से सत्य और आनन्द का विश्लेषण ही काव्य है।

कुछ अभिमत मुझे और भी प्रिय प्रतीत हुए। कार्लायस का कहना है कि कविता का कार्य है शिक्षण देना; पर वह शिक्षण पुलक-संचार से सम्पृक्त होना चाहिये। कदाचित् इसीलिए शैली को कहना पड़ा—'कवि वह बुलबुल है, जो तमसाच्छन्न वातावरण में अपने ही एकान्त को मधुर-मधुर ध्वनियों से प्रफुल्लित करने के लिये गाता है।' लेकिन जोबर्ट का कथन है कि कवि की अंगुलियों में वह जादू होता है कि उसके स्पर्श से शब्द चमक उठते हैं। और विश्व कवि शेक्सपियर का कहना है कि कवि के नयन एक अद्वितीय उन्माद में घूम-घूम कर भूतल से स्वर्ग और स्वर्ग से भूतल तक का सर्वेक्षण कर लेते हैं। परिणाम यह होता है कि ज्यों ही कल्पना अज्ञात वस्तुओं को आकार देने लगती है, कवि की लेखनी न केवल उसे मूर्तित कर देती है, वरन् उसमें एक महाप्राण का भी संचार कर देती है।

इन भावनाओं के क्रम में रमणिकाजी की कविताओं के संकलन को मैंने जो ध्यान से पढ़ा, तो वेलो के शब्दों में मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि वे सचमुच कवि हैं, जो प्रेम के रूप में महान जीवन-तत्वों का अनुभव करते और उन्हें वाणी दे देते हैं। मैंने यह भी अनुभव किया कि रमणिकाजी में अनुकरण की भावना को जागृत करने की अद्भुत सामर्थ्य है। यथा—

बज उठे सब तार मन के
झनझनाती देह मेरी
कामना कलि के दृगों में
स्वप्न की शबनम भरी थी
और चाहों की पुलकती
सिहर भी कुछ कह रही थी।
तृप्ति के कुछ अनुभवों ने
छीन ली सब प्यास मेरी
आज फिर से लौट आई
तप्त-मरु सी याद तेरी।

कवि आत्मा का चित्रकार होता है। वह जीवन-सौन्दर्य का ही नहीं, उसके सत्य स्वरूप का भी चित्रांकण करता है। वह वर्तमान का आनन्द लेता है। भविष्य के प्रति सुनी अनसुनी करता है। कभी प्रबुद्ध मानव बन जाता है और कभी मृगछौना जैसा सरल और चपल! विश्व भर का दैन्य और दुःख अनन्त स्वरों में उसका पीछा करता है। कल्पना की पावन घड़ियों में वह कभी चीत्कार और क्रन्दन के स्वर सुनता है और कभी आनन्दोल्लास और अट्टहास के। तभी तो कविवर शैली को लिखना पड़ा, वह, हमारे हृदय को, कंपित कर देता है—हिला देता है— और यहाँ तक पिघला देता है कि हम यह जान ही नहीं पाते कि मुझसे यह सब कौन कह गया और कैसे कह गया।'

'तुम मुझे अपनी स्मृति में बांध लो
मैं तुम्हे अपने गीतों की लड़ियों में
बांध संसार के कण-कण में समा जाऊंगी,।'

'होश मेरे पी रहे हैं
ये नशीले नैन तेरे
गा रहे हैं तार मन के
बावले हो गीत मेरे
आज मेरे प्यार की धुन
दर्द के स्वर माँगती है
स्नेह मदिरा माँगती है ।'

महामना एमर्सन का कहना है कि कवि में एक लक्षण राजा का होता है। वह है उसकी चिरंतन प्रसन्नता और मस्ती। क्योंकि उसका उद्देश्य होता है सौन्दर्य-दर्शन। उसे सात्विकता प्यारी होती है इस लिये नहीं कि उसकी कोई आवश्यकता है; वरन् इसलिये कि वह उसे रमणीक रूप में देखता है, उस पर मुग्ध होता है, उस लावण्यमयी दीप्ति के कारण, जो उससे छिटकती है। आनन्द और उल्लास की देवी सुन्दरता को वह विश्व भर में फैलाता रहता है।

रमणिका जी ने लिखा है —

पटरियों के बीच
बिखरे पत्थरों सा
रोज़ जलता पिसता
मेरा प्यार
अनकहा रह गया
जिसे सुनाने के लिए
मैंने जन्म-जन्म से शब्द चुन रखे थे
वह वहां नहीं था।
मेरे शब्द
पटरी के पत्थरों से लिपट गये
पर उसके रोने को
समय की गाड़ी की घड़घड़ाहट ने छुपा लिया
और कोई इस रोने को सुन न सका

शब्दों को लोगों ने पटरी के पत्थर हीं समझा
कविता के फूल नहीं!

कविता भावनाओं से रंजित बुद्धि का दूसरा नाम है। पर जो कविता वासना से जन्म लेती है, वह हमें नीचे गिराती है। वास्तविकता, हार्दिकता से जन्म ली हुई कविता सदा हमको सभ्य बनाती और उच्च स्तर पर ले जाती है।

रमणिका जी लिखती है –

मेरे शब्दों के बंध खोल दो
हे वीणा वादिनी
कि मैं सूक्ष्म होकर
मिल जाऊँ इस धरती के मिट्टी के कण-कण से
और गा लूँ मानव के गीत
अनुभव के तारों पर
मेरे भावों के पंख खोल दो
हे उर्वशी कल्पने
कि मुक्त होकर समेट लूँ गगन को
और गा लूँ सृष्टि के गीत
प्रकृति की लय पर।

रमणिकाजी की भाषा प्राञ्जल तो है ही; उसमें भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति की निर्भीकता और हृदयग्राहिणी मार्मिकता भी है। भावनाओं में जहाँ अतृप्ति का उपालम्भ है, वहाँ सामाञ्जस्य का वह उदात्त स्वर भी है, जो सहज ही जीवन के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेता है। और जब हम इस स्थिति पर विचार करते हैं कि यह तो अभी उनके कृतित्व का शुभारम्भ है, तब उनके समुज्वल भविष्य के प्रति आशा के साथ-साथ हम वह पावन आश्वासन भी मिलता है, जिसके लिये बालजक ने कहा है कि वास्तविक कविता तो मन के विशालक्षेत्र में बड़ी कष्टकर यात्राओं के बाद उत्पन्न होती है। और लोकमानुस को जीत सकने वाली कविता

रचने की शक्ति जिसमें हो, तो महामना भर्तृहरि के शब्दों में, फिर राजसत्ता भोगने की भी क्या आवश्यकता है ?

एक बार मुझे रमणिकाजी की ऐसी कुछ कविताओं को उन्हीं के द्वारा सुनने का अवसर मिला था। उस समय मैंने कहा था कि हिन्दी की वरेण्य कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा ने जिन भावनाओं की अभिव्यक्ति में रस नहीं लिया, अथवा कहूँ कि जो दिशाएं उनसे छूट गई हैं रमणिकाजी ने उनको भी अपने चित्रण का स्वर दिया है। और अब भी मैं अपने इस अभिमत पर स्थिर हूँ।

कानपुर
११-१-६६

भगवती प्रसाद वाजपेयी

सूची

गीत	:	१
बांध पर तुमको न पाई	:	३
कल्पना के पंख	:	५
मुखर पंछी	:	७
मुझे तुम छिपा लो	:	९
मेरे मन का पंछी कहाँ खो गया है	:	१०
वेदना का हास	:	११
आज फिर से लौट आई	:	१३
स्वप्न जागे	:	१४
कूल मनके लांघती है	:	१५
स्मित	:	१७
पलाश और पतझड़	:	१८
प्यार के दो गीत चुपचुप	:	२०
दो क्षण	:	२३
आज व्याकुल प्राण मेरे	:	२४
छल	:	२५
'एकले' ही हम रहे पर जिन्दगी भर	:	२६
अभी तो रात बाकी है	:	२८
गीत	:	३०
अगीत	:	३१
शब्द पिछड़े जाते हैं	:	३२

कफन	३४
कुछ सपने	३५
स्मृति के सैलाव	३६
अर्थ	३७
कच्ची दीवारें	३८
मिलन	३९
मैं और तुम	४०
अनाम चित्र बेनाम कथा	४१
सम्मोहन	४२
पटरी के पत्थर	४३
साये	४४
मेरा प्यार उभर-उभर आता है	४६
परतें	४८
दूरी	४९
सोनजुही	५०
आकाश के गीत	५१
बौर	५२
एक भी बल नहीं पड़ता	५४
निर्माण	५६
प्रतीक्षा की ज्योति	५७
रीति–प्रीत	५८
प्रीत	६०
साँझ—अनदेखी वेदना—अनबोली चाह	६२
अनिश्चय	६४
मेरे शब्दों के बंध खोल दो	६५
मेरे ज्योतिर्मय	६६
पंछी अनुभव का	६७
भीख	६८

अंकुर	६९
सागर तो अथाह है	७०
पहले तो	७१
बांध लो	७२
सांझ उतर आई	७३
थाती	७४
जीने को जीती हूँ	७५
जिन्दगी	७६
ऐ चांद	७८
अमिट प्यास	८०
आवाहन	८१
वीणावादिनी	८३
शक्ति-नारी	८४
जाग देश की नारी	८५
मैं भी तुम्हारे संग चलूँगी	८६
मुक्तक	८८
नर्स	८९
आदिम मजदूर	९०
तुलसी	९१
ला ! बन्दूक मुझे दे माता	९२
राखी	९४
सपना	९५
आज धरा भूखी है	९७
तारक टूटा	९९
हे चिह्नहीन ! हे चिताहीन !	१००
आज राम भूखा है	१०२
मां ! वसुन्धरे	१०४

बांध पर तुमको न पाई

बांध तो ली सुधि तुम्हारी, बांध पर तुमको न पाई !

क्या घटाओं की भुजायें
बांध पाती हैं पवन को ?
सिमटते दल सांध्य शतदल -
के, सुनहली उस किरण को।

आंक तो ली छवि तुम्हारी, आंक पर तुमको न पाई।
बांध पर तुमको न पाई ॥

निर्झरों का मुखर झरझर
प्रतिध्वनि में बंध सका क्या ?
मुक्त भावों का मधुर स्वर
गीत-धुन में सध सका क्या ?

साध तो वह स्वर लिया पर, साध में तुमको न पाई।
बांध पर तुमको न पाई ॥

फूल के कोमल हृदय को
बांध पाता हार कब है ?
चाह की प्यासी नजर को
झेल पाता प्यार कब है ?

गूंथ तो ली प्रीति-माला, जीत पर तुमको न पाई।
बांध पर तुमको न पाई ॥

नींद से चिपके पलक–दल–
में, नहीं सपना समाता,
और सुख–दुःख की डगर से
काल को मापा न जाता।

देख सपने तो लिए पर, झांक मैं तुमको न पाई।
बांध पर तुमको न पाई।।

देह–दर्पण में न आती
प्राण–छवि की पूर्ण झांकी,
क्षितिज से जाती न नभ की
नीलिमा अनथाह आंकी।

बांध तो ली काल की गति, बांध पर तुमको न पाई।
बांध पर तुमको न पाई।।